International Journal of Applied Research 2016; 2(1): 851-853

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(1): 851-853
www.allresearchjournal.com
Received: 11-11-2015
Accepted: 17-12-2015

डॉ. तीर्थानन्द मिश्र
व्याख्याता, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान, भारत

Corresponding Author:
डॉ. तीर्थानन्द मिश्र
व्याख्याता, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान, भारत

काव्य हेतु

डॉ. तीर्थानन्द मिश्र

प्रस्तावनाः
किसी भी कार्य का कोई न कोई कारण होता है जिसके फलस्वरूप उस कार्य की पूर्णता होती है। घट रूपी कार्य के लिए जैसे मिट्टी की आवश्यकता होती है ठीक उसी प्रकार 'काव्य' सदृश अलौकिक आनन्द प्रदान करने वाले वस्तु का भी कोई न कोई कारण आवश्यक है और ऐसा है भी। विभिन्न काव्याचार्यों ने अपने–अपने ढंग से काव्य हेतु के सन्दर्भ में अपने मन्तव्यों को प्रस्तुत किया है। इस सम्बन्ध में सर्वप्रथम विचार अग्नि पुराण में हुआ है जहॉ महर्षि व्यास ने लिखा है–

नरत्वं दुर्लभं लोके विद्या तत्र सुदुर्लभा।।
कवित्वं दुर्लभं तत्र शक्तिस्तत्र सुदुर्लभा ।। अग्निपुराण – 333/3

अर्थात संसार में मानव–जन्म दुर्लभ है, यदि मानव जीवन मिल भी जाय तो उसका विद्यावान् होना दुर्लभ है, यदि उसे विद्या भी प्राप्त हो जाय तो उसमें कवित्व शक्ति दुर्लभ है, यदि उसे कवित्व शक्ति भी प्राप्त हो जाय तो उसमें विवेक –ज्ञान अत्यन्त दुर्लभ है। क्योंकि सभी मनुष्य सभी शास्त्रों को नहीं जानते। अतः विवेक ज्ञान अत्यन्त दुर्लभ वस्तु है और यही विवेक ज्ञान अग्निपुराणकार के अनुसार काव्य का हेतु है।
अग्नि पुराण के पश्चात् संस्कृत भाषा के सर्वप्रथम आलंकारिक भामह की सम्मति में शास्त्र और काव्य का अध्ययन करने वालों में यही अन्तर होता है कि जड़ बुद्वि वाला भी मनुष्य गुरू के उपदेश से शास्त्र को अच्छी तरह से पढ सकता है, परन्तु काव्य की स्फूर्ति उसी व्यक्ति को होती है जो प्रतिभा से सम्पन्न होता है। यदि शिष्य में प्रतिभा का अभाव है तो गुरू के लाख उपदेश देने पर भी उसके हृदय में काव्य का अंकुर उत्पन्न नहीं हो सकता–

गुरूपदेशादध्येतुं शास्त्रं जडधियोऽप्यलम्।
काव्यं तु जायते जातु कस्यचित्प्रतिभावतः।। काव्यालंकार–1/5

इस तरह भामह ने प्रतिभा पर अधिक बल देते हुए 'काव्यविदुपासनम् एवं 'अन्य निबन्धावलोकन' के द्वारा 'व्युत्पत्ति' तथा काव्यक्रियादर के द्वारा 'विवेक' को काव्य हेतु के रूप में उपन्यस्त किया है–

शब्दाभिधेये विज्ञाय कृत्वा तद्विदुपासनम्।
विलोक्यान्यानिबंधाश्च कार्यः काव्यक्रियादरः।। काव्यालंकार–1/10

भामह के अनुसार काव्य हेतुओं में सर्वश्रेष्ठ स्थान प्रतिभा को ही प्राप्त है। वाणी की अभिव्यक्ति के दो मार्ग है– शास्त्र और काव्य। इनमें से शास्त्र प्रज्ञा के उपर आश्रित रहता है और काव्य प्रतिभा की उपज होता है। सुन्दर काव्य की सृष्टि प्रतिभा का ही फल है। प्रतिभा ही कवि के अलोक सामान्य अभिव्यक्ति का मुख्य कारण है। कवि और आलोचक दोनों के नैसर्गिक विकास हेतु प्रतिभा की नितान्त उपयोगिता है। कवि के लिए आवश्यक होती है 'कारयित्री प्रतिभा' और काव्य–मर्मज्ञ के लिए उपयोगी होती है भावयित्री प्रतिभा। समस्त कवियों ने एक स्वर से काव्य की रचना में प्रतिभा की उपयोगिता मानी है।
प्रतिभा के दो पक्ष होते है– 1. दृष्टि पक्ष 2. सृष्टि पक्ष। प्रथम पक्ष के अनुसार प्रतिभा विश्व के रूप निरीक्षण का एक प्रकार है। सृष्टि पक्ष में प्रतिभा नवीन सृष्टि का साधन है । कुन्तक का समग्र 'वक्रोक्ति जीवित' नामक ग्रन्थ प्रतिभा की अतिगूढ व्याख्या है। उनका स्पष्ट मत है कि काव्य में कवि प्रतिभा का ही चरम उत्कर्ष रहता है – कविप्रतिभा प्रौढिरेव प्राधान्येनावतिष्ठते।

कविता में जो कुछ भी चमत्कार है, वह सब प्रतिभा के द्वारा ही उत्पन्न होता है तथा काव्य के समग्र सौन्दर्य साधनों का प्राण यही प्रतिभा है। प्रतिभा का साम्राज्य बडा ही विस्तृत और विशाल होता है। काव्य में अर्थ और शब्द, स्फुरणा तथा अभिव्यंजना, दर्शन और वर्णन इन दोनों का उन्मीलन कवि प्रतिभा के द्वारा ही होता है। जब तक इन दोनों की अभिव्यक्ति नहीं होती तब तक कोई भी व्यक्ति 'कवि' कहलाने का अधिकारी नहीं होता। कवि होने के लिए व्यक्ति को तत्त्वद्रष्टा होने के साथ ही साथ शब्द्रस्रष्टा होने की नितान्त आवश्यकता होती है। भारतीय आलोचकों की मान्यता है कि कवि के लिए 'दर्शन' और 'वर्णन' दोनों ही अत्यन्त महत्वपूर्ण है। द्रष्टा होने पर भी शब्द स्रष्टा हुए बिना कोई भी व्यक्ति 'कवि' शब्द का पात्र नहीं बन सकता। इस विषय में अभिनवगुप्त के गुरू भट्टतौत की यह विवेचना अत्यन्त मार्मिक है–

> स तत्त्वदर्शनादेव शास्त्रेषु पठितः कविः, दर्शनात् वर्णनाच्च रूढा लोके कविश्रुतिः।
> तथा हि दर्शने स्वच्छे नित्येऽप्यदिकवर्मुनेः, नोदिता कविता लोके यावज्जाता न वर्णना।। काव्यानु. 379

कवि ऋषि होता है। शास्त्र में तत्त्व के दर्शन मात्र से कोई भी व्यक्ति कवि कहलाता है, परन्तु लोक में कविपदवी दर्शन तथा वर्णन दोनों के ही उपर अवलम्बित होती है। प्रतिभा का बीज मानव ह्रदय में किस प्रकार अंकुरित होता है। इस प्रश्न का समाधान भारतीय आलोचकों ने मनोवैज्ञानिक रीति से किया है, अधिकांश शास्त्रकार प्रतिभा को पूर्वजन्म में उत्पन्न संस्कार विशेष मानते हैं। दण्डी प्रतिभान (प्रतिभा) को पूर्ववासना के गुणों से सम्बद्व बतलाते हैं। वामन भी इसे जन्मान्तर संस्कार मानते हैं। जिसकी पुष्टि अभिनवगुप्त ने भी अभिनव भारती में 'अनादि प्राक्तन संस्कार प्रतिभानमयः (अभिनव भारती खण्ड–1 पृ. 346) लिखते हुए की है। अभिनवगुप्त की प्रतिभा विषयक विचार का समर्थन करते हुए काव्यप्रकाशक मम्मट ने कहा है– शक्तिः कवित्वबीजरूपः संस्कार– विशेषः यां विना काव्यं न प्रसरेत, प्रसृतं वा उपहसनीयं स्यात्..... का प्र. 1/3 वृत्ति। पण्डितराज जगन्नाथ प्रतिभा के उदय हेतु दो कारण बतलाते है। प्रथम कारण है किसी देवता के प्रसाद या साधु के अनुग्रह से अदृष्ट का उदय। दूसरा कारण है व्युत्पत्ति तथा अभ्यास का परिपाक, जिसके कारण अधिक उम्र बीत जाने पर भी अनेक व्यक्तियों में अकस्मात् कवित्व का उदय हो जाता है।

प्रतिभा का सबसे सुन्दर लक्षण भट्टतौत ने दिया है– 'प्रज्ञा नवनवोन्मेष शालिनी प्रतिभा मता'– अर्थात् नये –नये अर्थों का उन्मीलन करने वाली प्रज्ञा ही प्रतिभा कहलाती है। कुन्तक के अनुसार पूर्वजन्म के तथा इस जन्म के संस्कार के परिपाक से पुष्ट होने वाली विशिष्ट कवित्व शक्ति ही प्रतिभा है–

> प्राक्तनाद्यतन संस्कार –परिपाक प्रौढा प्रतिभा काचिदेव कविशक्तिः।

वामन के अनुसार प्रतिभान या प्रतिभा कवित्व का बीज है। जिस प्रकार बीज से अभिनव पदार्थ की स्फूर्ति होती है वही कार्य प्रतिभा के द्वारा भी होता है। प्रतिभा के स्वरूप के सन्दर्भ में परवर्ती काव्य शास्त्रियों ने भी उक्त मान्यता का ही किसी न किसी रूप में समर्थन किया है।

काव्य हेतु विषयक विभिन्न मत

विभिन्न आचार्यों के उक्त मतानुसार प्रतिभा एक जन्मान्तरीय संस्कार विशेष है ऐसा मानस धर्म है जो दूसरे जन्म में होने वाले कवित्व के संस्कार के परिपाक होने पर उत्पन्न होता है। भामह के अनन्तर दण्डी ने काव्य साधक हेतुओं में प्रतिभा के साथ– साथ शास्त्रज्ञान तथा अभ्यास को भी आवश्यक माना है। उनकी मान्यता है कि केवल प्रतिभा काव्य के स्फूर्ति के लिए समर्थ नहीं हो सकती। इसके साथ निर्मल शास्त्र तथा अमन्द अभियोग का सहयोग भी उतना ही आवश्यक है–

> नैसर्गिकी च प्रतिभा श्रुतं च बहु निर्मलम्।
> अमन्दाश्चाभियोगश्च कारणं काव्यसम्पदः।। काव्यादर्श– 1/103

वामन भी इस विषय में दण्डी के ही मार्ग का अनुसरण करते प्रतीत होते हैं, ये प्रतिभा को प्रतिभान शब्द के द्वारा अभिहीत कर उसे कवित्व का बीज मानते है। वे प्रतिभा के अतिरिक्त काव्यों से परिचय, काव्य रचना में उद्यम, काव्योपदेश करने वाले गुरू की सेवा तथा विविध शास्त्रों का ज्ञान भी काव्याभिव्यक्ति में कारण मानते है। इसके अतिरिक्त उन्होंने अवधानचित्त की एकाग्रता को भी काव्य रचना का अंग स्वीकार किया है। रूद्रट ने काव्य–कारणों में प्रतिभा व्युत्पत्ति तथा अभ्यास को एक साथ कारण माना है। प्रतिभा के स्थान पर वे शक्ति शब्द का प्रयोग करते हैं। इसी शक्ति के द्वारा एकाग्रचित होने पर अर्थों का अनेक प्रकार से स्फुरण होता है तथा कमनीय पद स्वयं कवि के समक्ष प्रतिभासित होते है–

> मनसि सदा सुसमाधिनि विस्फुरणमनेकधाभिधेयस्य।
> अक्लिष्टानि पदानि च विभान्ति यस्यामसौ शक्तिः।। काव्यालंकार 1/15

ध्वन्यालोककार आनन्दवर्धन की सम्मति में व्युत्पत्ति तथा प्रतिभा, दोनों काव्यकारणों में प्रतिभा ही श्रेयस्कर है। शास्त्र की व्युत्पत्ति न रखने वाला कवि अपने काव्य में अनेक दोंषों का सम्पादन कर बैठता है। प्रतिभा इन समस्त दोषों को दूर कर देती है। प्रतिभा के प्रबल समर्थन में ध्वन्यालोककार की उक्ति नितान्त स्पष्ट है–

> अव्युत्पत्तिकृतो दोषः शक्त्या संव्रियते कवेः।
> यस्त्वशक्ति कृतस्तस्य झटित्यवभासते ।। ध्वन्यालोक –3/5 की वृत्ति

राजशेखर शक्ति को ही काव्य– कला के उन्मीलन में प्रधान हेतु मानते हैं। वे समाधि तथा अभ्यास दोनों को शक्ति का उद्भासक मानते है।

आचार्य मम्मट का सिद्वान्त है कि शक्ति, निपुणता तथा अभ्यास ये तीनों सम्मिलित रूप में काव्य की निष्पत्ति में कारण होते है। शक्ति प्रतिभा का ही पर्याय है जिसके बिना काव्य निष्पन्न नहीं होता तथा निषन्न होने पर वह काव्य लोकप्रिय नहीं होता प्रत्युत उपहास का कारण बनता है। मम्मट के अनुसार काव्य, शास्त्र तथा अन्य विद्याओं के अनुशीलन से जो चातुरी उत्पन्न होती है उसी का नाम निपुणता है। काव्य के मर्मज्ञ विद्वान के पास रहकर उनकी शिक्षा के द्वारा काव्य– कला के निरन्तर चिन्तन का नाम अभ्यास है। प्रतिभा तथा व्युत्पत्ति (निपुणता) से सम्पन्न होने पर भी कवि अपने मनोरथ में तब तक कृतकार्य नहीं होता जब तक वह सद्गुरू की शिक्षा से काव्य का अभ्यास नहीं करता। काव्य–प्रकाशकार ने शक्ति, निपुणता तथा अभ्यास इन तीनों को काव्य का स्वतन्त्र रूप से अलग–अलग कारण न मानकर सम्मिलित रूप से कारण माना है। इसी लिए काव्य हेतु विषय सुप्रसिद्व कारिका में हेतु शब्द का एकवचन में प्रयोग किया है–

> शक्तिर्निपुणता लोकशास्त्रकाव्याद्यवेक्षणात्।

काव्यज्ञ–शिक्षयाभ्यास इति हेतुस्तदुद्भवे।। काव्यप्रकाश –1/3

निष्कर्ष

उक्त विवेचन का निष्कर्ष यह है कि काव्य का मुख्य हेतु शक्ति या प्रतिभा है। यह एक जन्मान्तरीय संस्कार है और विद्या के अभ्यास से शनैः शनैः विकसित होता है। दूसरे हेतु का नाम निपुणता या व्युत्पत्ति है जो लोक तथा शास्त्र के अवेक्षण तथा अनुशीलन से उत्पन्न होती है। अभ्यास तृतीय काव्य– हेतु है। काव्य की सृष्टि करने वाले तथा उसकी समीक्षा करने वाले विद्वानों की शिक्षा से कविकर्म में अभ्यास उत्पन्न होता है। सैद्वान्तिक रूप से काव्य के रूप, तत्त्व तथा मर्म को जानना ही पर्याप्त नहीं होता, प्रत्युत कवि को व्यावहारिक रूप से कविता बनाने की कला का सीखना भी आवश्यक होता है।

सहायक ग्रन्थ सूची–

1. काव्यालंकार – परिमल पब्लिकेशन्स दिल्ली–1990
2. काव्यादर्श– चौखम्बा विद्याभवन वाराणसी –1984
3. काव्यप्रकाश – ज्ञान मण्डल लिमिटेड वाराणसी –1960
4. इस गंगाधर – का. हि. वि. वि. वाराणसी वि. सं. –2029
5. ध्वन्यालोक – ज्ञानमण्डल लिमिटेड वाराणसी – संवत् 2042
6. साहित्य शास्त्र के प्रमुख पक्ष – वाणी वितान प्रकाशन वाराणसी– 1966
7. संस्कृत आलोचना– चौखम्भा संस्कृत भवन, वाराणसी 1978